www.researchvidyapith.com ISSN (Online): 3048-7331

Research Vidyapith International Multidisciplinary Journal

(An Open Access, Peer-reviewed & Refereed Journal)

(Multidisciplinary, Monthly, Multilanguage)

*** Vol-1* *Issue-4* *November 2024***

बौद्ध संघ की कार्यप्रणाली– एक अध्ययन

प्रिन्स कुमार यादव

शोध छात्र, प्राचीन इतिहास, गांधी शताब्दी स्मारक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोयलसा, आजमगढ़

सारांश

बौद्ध संघ प्राचीन भारतीय समाज में एक संगठित धार्मिक संस्था थी, जिसकी स्थापना स्वयं गौतम बुद्ध ने की थी। यह संघ न केवल आध्यात्मिक साधना का केंद्र था, बल्कि एक अनुशासित प्रशासनिक एवं सामाजिक संगठन भी था। बौद्ध संघ की कार्यप्रणाली को समझने के लिए इसकी संरचना, अनुशासन प्रणाली, आर्थिक व्यवस्था, प्रशासनिक प्रक्रियाएँ और समाज में इसकी भूमिका को विश्लेषण करना आवश्यक है। संघ में प्रवेश की एक निश्चित प्रक्रिया थी, जिसमें प्रव्रज्या और उपसम्पदा संस्कार प्रमुख थे। संघ में रहने वाले भिक्षु एवं भिक्षुणाएँ विनय पिटक में उल्लिखित कठोर नियमों का पालन करते थे, जो उनके दैनिक आचरण, भिक्षाटन और ध्यान साधना से जुड़े थे। संघ की प्रशासनिक व्यवस्था सामूहिक निर्णय प्रणाली पर आधारित थी, जिसमें उपोसथ सभा (मासिक बैठकें) महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थीं। इन बैठकों में भिक्षु अपने दोषों की स्वीकृति देते और संघ में अनुशासन बनाए रखने के लिए सामूहिक विचार–विमर्श किया जाता था। संघ की आर्थिक व्यवस्था पूरी तरह से समाज पर निर्भर थी। भिक्षु और भिक्षुणियाँ अपने भिक्षाटन के माध्यम से जीवन यापन करते थे, और समाज से दान प्राप्त करते थे। कई राजाओं, विशेषकर सम्राट अशोक ने संघ को संरक्षण और आर्थिक सहायता प्रदान की। समाज में बौद्ध संघ की भूमिका केवल धार्मिक तक सीमित नहीं थी, बल्कि यह शिक्षा, नैतिकता, और समाज सुधार का भी केंद्र बना। संघ में अध्ययन एवं शिक्षण की परंपरा थी, जिसमें त्रिपिटक ग्रंथों का अध्ययन किया जाता था। समय के साथ, बौद्ध संघ में विभाजन होने लगे, जिससे महायान और हीनयान शाखाएँ अस्तित्व में आईं। आंतरिक मतभेदों, प्रशासनिक जटिलताओं और सामाजिक–राजनीतिक परिवर्तनों के कारण संघ की प्रभावशीलता में गिरावट आई। अंततः, भारत में बौद्ध धर्म के पतन के साथ संघ की पारंपरिक कार्यप्रणाली भी कमजोर पड़ गई। इस शोध पत्र के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि बौद्ध संघ की कार्यप्रणाली एक सुव्यवस्थित एवं अनुशासित संगठन का उदाहरण प्रस्तुत करती है। यदि इसे आधुनिक संदर्भ में देखा जाए, तो यह संगठनात्मक प्रबंधन, नैतिक अनुशासन और सामूहिक निर्णय प्रक्रिया के लिए एक आदर्श मॉडल साबित हो सकता है।

मुख्य–शब्दः बौद्ध संघ, विनय पिटक, प्रव्रज्या, उपसम्पदा, उपोसथ, भिक्षु, भिक्षुणी, त्रिपिटक, महायान, हीनयान, कार्यप्रणाली।

परिचय

बौद्ध संघ प्राचीन भारत में विकसित एक संगठित धार्मिक संस्था थी, जो न केवल आध्यात्मिक साधना का केंद्र थी, बल्कि सामाजिक और नैतिक अनुशासन का भी प्रतीक मानी जाती थी। गौतम बुद्ध द्वारा स्थापित यह संघ एक समुदाय के रूप में संचालित होता था, जिसमें भिक्षु और भिक्षुणियाँ नियमबद्ध जीवन जीते थे। बौद्ध धर्म में संघ की अवधारणा केवल साधु–संतों के समूह तक सीमित नहीं थी, बल्कि यह एक सुव्यवस्थित प्रणाली थी, जो समाज में नैतिकता, शिक्षण और अनुशासन को बनाए रखने में सहायक थी। बौद्ध संघ का गठन उस समय की सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए किया गया था। गौतम बुद्ध ने महसूस किया कि

आध्यात्मिक उन्नति के लिए एक व्यवस्थित ढांचे की आवश्यकता है, जिसमें अनुयायी न केवल स्वयं को शुद्ध करें, बल्कि समाज के कल्याण में भी योगदान दें। संघ की स्थापना इसी विचारधारा के अनुरूप हुई और यह बौद्ध धर्म के तीन प्रमुख स्तंभों दृ बुद्ध, धर्म और संघ दृ में से एक के रूप में स्थापित हुआ। समय के साथ, संघ की कार्यप्रणाली ने न केवल धार्मिक बल्कि सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तनों को भी प्रभावित किया। बौद्ध संघ को सामान्यतः उन भिक्षुओं और भिक्षुणियों के समुदाय के रूप में परिभाषित किया जाता है, जो बौद्ध धर्म के सिद्धांतों का पालन करते हुए एक नियमानुसार जीवन व्यतीत करते हैं। पालि भाषा के ग्रंथों में 'संघ' शब्द का उल्लेख एक ऐसे समुदाय के रूप में किया गया है, जिसमें व्यक्ति सांसारिक बंधनों से मुक्त होकर मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रयासरत रहते हैं। यह केवल धार्मिक संगठन नहीं था, बल्कि एक अनुशासित संस्था थी, जिसका प्रमुख उद्देश्य नैतिक और आध्यात्मिक विकास करना था। बौद्ध संघ का महत्व कई दृष्टिकोणों से समझा जा सकता है। यह आध्यात्मिक रूप से व्यक्ति को ध्यान और साधना के माध्यम से आत्मिक उन्नति की दिशा में प्रेरित करता था। सामाजिक दृष्टि से, संघ जाति और वर्ग की बाधाओं को तोड़कर सभी के लिए समान अवसर प्रदान करता था। बौद्ध संघ ने शिक्षा के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया, जहाँ भिक्षु न केवल धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन करते थे, बल्कि वेद, दर्शन, गणित और चिकित्सा जैसे विषयों का भी अध्ययन करते थे। इसके अतिरिक्त, संघ राजनीतिक रूप से भी प्रभावी रहा, विशेष रूप से सम्राट अशोक के शासनकाल में, जब बौद्ध संघ को राज्य का समर्थन प्राप्त हुआ और इसे प्रचार–प्रसार के लिए उपयोग किया गया।

बौद्ध धर्म में संघ की अवधारणा त्रिरत्न (बुद्ध, धर्म, संघ) के सिद्धांत पर आधारित है। इसमें संघ को एक पवित्र संस्था माना गया, जहाँ व्यक्ति अपनी आध्यात्मिक यात्रा को पूर्ण करने के लिए प्रवेश करता है। बौद्ध संघ की यह अवधारणा इस विचार पर आधारित थी कि सांसारिक मोह–माया से मुक्त होकर ही व्यक्ति ज्ञान प्राप्त कर सकता है। संघ में प्रवेश लेने के लिए दो चरणों को पार करना आवश्यक था दृ प्रव्रज्या (प्रारंभिक दीक्षा) और उपसम्पदा (पूर्ण दीक्षा)। जो व्यक्ति इन प्रक्रियाओं से गुजरता था, उसे संघ के नियमों का पालन करना आवश्यक होता था। बौद्ध संघ में अनुशासन का विशेष महत्व था, जिसे 'विनय' के रूप में जाना जाता था। विनय पिटक में संघ के सदस्यों के लिए विस्तृत नियम निर्दिष्ट किए गए हैं, जिनका पालन करना अनिवार्य था। इन नियमों में आहार, वाणी, आचरण और ध्यान की विधियाँ शामिल थीं। संघ के सदस्यों का कर्तव्य केवल ध्यान और अध्ययन करना नहीं था, बल्कि समाज में नैतिकता और शांति स्थापित करने के लिए भी वे सक्रिय भूमिका निभाते थे।

बौद्ध संघ की स्थापना के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को समझने के लिए उस समय की सामाजिक और धार्मिक परिस्थितियों का अवलोकन करना आवश्यक है। छठी शताब्दी ईसा पूर्व में भारतीय समाज में कई धार्मिक और दार्शनिक धाराओं का उदय हुआ, जो मुख्य रूप से ब्राह्मणवादी परंपराओं से भिन्न थीं। इस काल में श्रमण परंपरा का प्रभाव बढ़ा, जिसमें तप, योग और ध्यान को प्रमुख स्थान दिया गया। श्रमण संप्रदाय उन धार्मिक व्यक्तियों का समूह था, जो सांसारिक जीवन त्यागकर आत्मज्ञान की खोज में निकले थे। इस परंपरा में बौद्ध संघ का भी उद्भव हुआ, जिसने आत्मज्ञान प्राप्ति के लिए एक संगठित प्रणाली प्रदान की। गौतम बुद्ध के काल में समाज अनेक प्रकार की कुरीतियों, जातिवाद और अनुष्ठानों से ग्रसित था। यज्ञ और बलिप्रथा जैसी परंपराओं का प्रचलन था, जो समाज के विभिन्न वर्गों में असमानता को जन्म देती थीं। इन परिस्थितियों में बुद्ध ने एक ऐसी संस्था की आवश्यकता महसूस की, जो नैतिकता और आत्मसंयम पर आधारित हो तथा जिसमें किसी भी व्यक्ति को उसके जन्म के आधार पर नहीं, बल्कि उसके आचरण के अनुसार स्वीकार किया जाए। इसी विचारधारा से प्रेरित होकर बौद्ध संघ की स्थापना हुई, जो भिक्षुओं और भिक्षुणियों के लिए एक अनुशासित आश्रम व्यवस्था के रूप में विकसित हुआ।

बुद्ध के प्रथम उपदेश के बाद धीरे–धीरे संघ का विस्तार हुआ और अनेक व्यक्ति संघ में सम्मिलित होने लगे। मगध के राजा बिंबिसार ने संघ को अपना राजकीय समर्थन दिया और संघ के लिए स्थायी विहार की व्यवस्था करवाई। इसके बाद, संघ में न केवल राजाओं और व्यापारियों ने योगदान दिया, बल्कि समाज के विभिन्न वर्गों से भी लोग जुड़ने लगे। संघ की सदस्यता के लिए किसी जाति या वर्ण का बंधन नहीं था, जो इसे अन्य समकालीन धार्मिक संस्थाओं से भिन्न बनाता था। बुद्ध ने संघ के सदस्यों के लिए कुछ मूलभूत नियम निर्धारित किए, जिन्हें विनय पिटक में संकलित किया गया। इन नियमों का पालन सभी भिक्षुओं और भिक्षुणियों के लिए अनिवार्य था, ताकि संघ की अनुशासन प्रणाली सुचारु रूप से चल सके।

बौद्ध संघ न केवल एक धार्मिक संस्था थी, बल्कि एक सुव्यवस्थित सामाजिक और प्रशासनिक संगठन भी था। इसकी संरचना अत्यंत अनुशासित थी और इसमें एक स्पष्ट पदानुक्रम मौजूद था, जो संघ की कार्यप्रणाली को सुचारु रूप से संचालित करने में सहायक था। संघ के भीतर विभिन्न वर्गों और स्तरों की एक निश्चित प्रणाली थी, जो अनुशासन, शिक्षण और नेतृत्व के आधार पर निर्धारित की गई थी। संघ का मूल उद्देश्य आत्मज्ञान की प्राप्ति और धर्म प्रचार था, लेकिन इसके साथ ही यह समाज में नैतिकता, शांति और सामाजिक समरसता को बनाए रखने का भी प्रयास करता था। बौद्ध संघ की संरचना को मुख्य रूप से दो प्रमुख घटकों में विभाजित किया जा सकता है– भिक्षु संघ (पुरुष संघ) और भिक्षुणी संघ (महिला संघ)। इसके अतिरिक्त, संघ के भीतर भिक्षुओं और भिक्षुणियों के लिए विभिन्न स्तर निर्धारित किए गए थे, जिनमें नवक, स्थविर और महास्थविर जैसे पद शामिल थे। संघ के भीतर कुछ प्रमुख संस्थाएँ भी थीं, जिनका कार्य संघ की अनुशासन प्रणाली, प्रशासन और शिक्षण कार्यों का संचालन करना था।

प्रारंभिक बौद्ध संघ एक अनुशासित संस्था थी, जिसमें प्रत्येक सदस्य को निश्चित नियमों और आचार संहिता का पालन करना आवश्यक था। संघ का मूल संगठन अत्यंत व्यवस्थित था और इसे आत्मसंयम, ध्यान एवं साधना के आधार पर चलाया जाता था। संघ में प्रवेश के लिए एक विशेष प्रक्रिया निर्धारित की गई थी, जिसे प्रव्रज्या और उपसम्पदा कहा जाता था। प्रव्रज्या प्रक्रिया के माध्यम से व्यक्ति संघ में प्रवेश करता था और उपसम्पदा के बाद वह पूर्ण रूप से संघ का सदस्य बन जाता था। संघ की प्रशासनिक व्यवस्था सामूहिक निर्णय प्रणाली पर आधारित थी। संघ के प्रमुख निर्णय सामूहिक सहमति से लिए जाते थे और यदि किसी सदस्य पर कोई आरोप लगता था, तो उसका निवारण संघ की बैठक में किया जाता था। प्रत्येक माह उपोसथ नामक सभा का आयोजन किया जाता था, जिसमें संघ के सदस्य अपने आचरण की समीक्षा करते और यदि किसी ने कोई नियम भंग किया होता, तो उसे संघ के समक्ष स्वीकार करने के लिए कहा जाता। संघ के प्रमुख निर्णय पाली ग्रंथों में उल्लिखित 'संघकर्म' के आधार पर लिए जाते थे, जिसमें संघ के नियमों का विस्तारपूर्वक उल्लेख किया गया है। बौद्ध संघ की स्थापना और विकास का ऐतिहासिक अध्ययन यह दर्शाता है कि यह केवल एक धार्मिक संगठन नहीं था, बल्कि एक सामाजिक और नैतिक आंदोलन भी था, जिसने भारतीय समाज पर गहरा प्रभाव डाला। इसकी कार्यप्रणाली अनुशासन, नैतिकता और आत्मसंयम पर आधारित थी, जो आज भी प्रासंगिक है। संघ की प्रशासनिक और अनुशासनात्मक व्यवस्था एक सुव्यवस्थित समाज के निर्माण में सहायक सिद्ध हुई, जिसने आगे चलकर बौद्ध धर्म के वैश्विक प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

बौद्ध संघ की कार्यप्रणाली

बौद्ध संघ केवल एक धार्मिक संस्था ही नहीं, बल्कि एक सुव्यवस्थित प्रशासनिक संगठन भी था, जिसमें अनुशासन, नैतिकता और आत्मसंयम को विशेष महत्व दिया जाता था। इसकी कार्यप्रणाली स्पष्ट नियमों और सिद्धांतों पर आधारित थी, जिन्हें बौद्ध ग्रंथों में विस्तार से वर्णित किया गया है। संघ में प्रवेश की एक निश्चित प्रक्रिया थी, जिसका उद्देश्य नए अनुयायियों को अनुशासन और आध्यात्मिक साधना के अनुरूप तैयार करना था। इसके अतिरिक्त, भिक्षुओं और भिक्षुणियों के लिए नियम निर्धारित किए गए थे, जिन्हें विनय पिटक में संकलित किया गया। संघ के अनुशासन और नियमों का पालन अत्यंत आवश्यक था, क्योंकि यह संघ की स्थिरता और उसकी प्रभावशीलता को सुनिश्चित करता था।

बौद्ध संघ में प्रवेश एक सहज प्रक्रिया नहीं थी, बल्कि इसके लिए व्यक्ति को निश्चित संस्कारों से गुजरना पड़ता था। यह प्रक्रिया दो मुख्य चरणों में विभाजित थी– प्रव्रज्या और उपसम्पदा। प्रव्रज्या वह प्रारंभिक चरण था, जिसमें कोई भी व्यक्ति गृहस्थ जीवन का त्याग कर संघ में शामिल होने की इच्छा व्यक्त करता था। यह चरण एक तरह की दीक्षा प्रक्रिया थी, जिसमें नवदीक्षित भिक्षु को गुरु के संरक्षण में रखा जाता था और उसे संघ के नियमों का पालन करने की शिक्षा दी जाती थी। प्रव्रज्या के दौरान व्यक्ति को अपने सांसारिक जीवन से मुक्त होकर संघ की जीवनशैली को अपनाने की प्रतिज्ञा लेनी होती थी। इस प्रक्रिया में व्यक्ति को अपने सभी सांसारिक वस्त्रों और संपत्तियों का त्याग करना होता था और उसे संघ द्वारा निर्धारित भिक्षु–वस्त्र धारण करने होते थे। उपसम्पदा प्रव्रज्या के बाद का दूसरा चरण था, जिसमें भिक्षु को पूर्ण रूप से संघ का सदस्य माना जाता था। यह दीक्षा प्रक्रिया तब पूरी होती थी जब भिक्षु संघ की सभी आवश्यकताओं और अनुशासन नियमों को स्वीकार कर लेता था। उपसम्पदा के लिए व्यक्ति की न्यूनतम आयु 20 वर्ष निर्धारित थी और उसे वरिष्ठ भिक्षुओं की स्वीकृति प्राप्त करनी होती थी। उपसम्पदा संस्कार के दौरान भिक्षु को संघ के नियमों की शपथ दिलाई जाती थी और

उसे बताया जाता था कि वह अब संघ का एक अभिन्न अंग बन चुका है।

संघ की कार्यप्रणाली में अनुशासन का विशेष महत्व था और इसके पालन के लिए कठोर नियम बनाए गए थे। संघ में सभी भिक्षुओं और भिक्षुणियों को एक समान रूप से व्यवहार करना आवश्यक था और उन्हें संघ के सामूहिक निर्णयों का पालन करना पड़ता था। संघ की अनुशासन प्रणाली संघकर्म नामक प्रक्रिया पर आधारित थी, जिसमें किसी भी अनुशासनहीनता की स्थिति में सामूहिक रूप से निर्णय लिया जाता था। संघ में अनुशासन बनाए रखने के लिए उपोसथ नामक मासिक सभाएँ आयोजित की जाती थीं, जिनमें संघ के सदस्य अपने आचरण की समीक्षा करते थे और यदि किसी सदस्य ने कोई नियम तोड़ा होता, तो उसे सार्वजनिक रूप से स्वीकार करना पड़ता था। यदि कोई भिक्षु या भिक्षुणी संघ के नियमों का उल्लंघन करता था, तो उसे प्रायश्चित करने का अवसर दिया जाता था, लेकिन गंभीर मामलों में संघ से निष्कासित भी किया जा सकता था। संघ के अनुशासन नियमों में अहिंसा और आत्मसंयम पर विशेष जोर दिया गया था। भिक्षुओं को अपने जीवन को सादगीपूर्ण और संयमित रखने की शिक्षा दी जाती थी। उन्हें लोभ, क्रोध और अहंकार से दूर रहने की सलाह दी जाती थी और वे अपनी दिनचर्या को संघ के निर्देशों के अनुसार संचालित करते थे। संघ के नियमों का उल्लंघन करने वाले सदस्यों के लिए संघ–परिषदों का आयोजन किया जाता था, जहाँ उनके आचरण की समीक्षा की जाती थी और उचित दंड या प्रायश्चित निर्धारित किया जाता था। इस प्रणाली से संघ में अनुशासन की निरंतरता बनी रहती थी और इसकी कार्यप्रणाली सुचारु रूप से चलती थी।

संघ की प्रशासनिक व्यवस्था

बौद्ध संघ एक सुव्यवस्थित धार्मिक एवं सामाजिक संगठन था, जिसकी प्रशासनिक व्यवस्था अत्यंत संगठित और अनुशासित थी। इसकी स्थापना का उद्देश्य न केवल आध्यात्मिक उन्नति था, बल्कि अनुशासन, नैतिकता और सामाजिक समरसता को बनाए रखना भी था। बौद्ध संघ में प्रत्येक गतिविधि एक सुव्यवस्थित प्रशासनिक ढांचे के अंतर्गत संचालित होती थी। संघ में प्रवेश की प्रक्रिया, विवाद समाधान और निर्णय पद्धति, तथा नियमित बैठकों (उपोसथ) के माध्यम से इसका प्रशासन सुचारु रूप से संचालित किया जाता था। यह सुनिश्चित किया जाता था कि संघ के प्रत्येक सदस्य द्वारा निर्धारित नियमों का पालन किया जाए और संघ की कार्यप्रणाली में किसी भी प्रकार का व्यवधान उत्पन्न न हो।

बौद्ध संघ में प्रवेश की प्रक्रिया अत्यंत व्यवस्थित और अनुशासित थी। कोई भी व्यक्ति संघ का सदस्य तभी बन सकता था, जब वह अपने सांसारिक जीवन का त्याग कर संन्यासी जीवन अपनाने के लिए तैयार हो। यह प्रक्रिया दो चरणों में पूरी होती थी– प्रव्रज्या और उपसम्पदा। प्रव्रज्या वह प्रारंभिक चरण था, जिसमें व्यक्ति को गृहस्थ जीवन से मुक्त होकर संघ में प्रवेश करने की अनुमति दी जाती थी। यह एक दीक्षा संस्कार था, जिसमें प्रवेश लेने वाले व्यक्ति को संघ के वरिष्ठ भिक्षुओं के मार्गदर्शन में रहना पड़ता था। इस प्रक्रिया के दौरान उसे अपनी सभी सांसारिक संपत्तियों का त्याग करना होता था और संघ के निर्धारित वस्त्र धारण करने होते थे। प्रव्रज्या प्राप्त करने के बाद भिक्षु को संघ की मूलभूत शिक्षाओं, आचार–संहिता और ध्यान–साधना का अभ्यास कराया जाता था। इसके बाद उपसम्पदा का चरण आता था, जिसमें भिक्षु को पूर्ण रूप से संघ का सदस्य स्वीकार किया जाता था। उपसम्पदा संस्कार की प्रक्रिया में वरिष्ठ भिक्षु यह सुनिश्चित करते थे कि नया भिक्षु संघ के नियमों और अनुशासन को आत्मसात कर चुका है। यह प्रक्रिया एक संगठित विधि से संचालित की जाती थी, जिसमें नवदीक्षित भिक्षु संघ के सभी नियमों का पालन करने की शपथ लेते थे और उन्हें संघ की आधिकारिक गतिविधियों में शामिल किया जाता था।

संघ की प्रशासनिक व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण पहलू इसकी विवाद समाधान प्रणाली थी, जिसके अंतर्गत किसी भी प्रकार के मतभेदों को हल करने के लिए एक विशेष प्रक्रिया अपनाई जाती थी। बौद्ध संघ में पारस्परिक समन्वय और सामूहिक निर्णय लेने की परंपरा थी। यदि संघ के किसी सदस्य के आचरण को लेकर कोई विवाद उत्पन्न होता था, तो उसे संघ की विशेष परिषद में प्रस्तुत किया जाता था, जहाँ वरिष्ठ भिक्षु इस पर विचार करते थे। संघ में निर्णय लेने की प्रक्रिया लोकतांत्रिक पद्धति पर आधारित थी, जिसमें सभी भिक्षुओं को विचार–विमर्श करने और अपने मत व्यक्त करने का अधिकार प्राप्त था। किसी भी विवाद के समाधान के लिए संघकर्म नामक प्रक्रिया अपनाई जाती थी, जिसमें संघ के सदस्य सामूहिक रूप से किसी मुद्दे पर निर्णय लेते थे।

संघ की प्रशासनिक व्यवस्था में नियमित बैठकों का विशेष महत्व था, जिन्हें उपोसथ कहा जाता था। ये बैठकें प्रत्येक पूर्णिमा और अमावस्या को आयोजित की जाती थीं और इनमें संघ के सभी सदस्य अनिवार्य रूप से

उपस्थित होते थे। उपोसथ बैठकों का उद्देश्य संघ के सदस्यों द्वारा अपने आचरण की समीक्षा करना, संघ की नीतियों पर विचार–विमर्श करना और भविष्य की योजनाओं को निर्धारित करना था। उपोसथ बैठकों में भिक्षुओं को अपने पिछले कार्यों की समीक्षा करने का अवसर मिलता था और यदि किसी सदस्य ने संघ के नियमों का उल्लंघन किया होता था, तो उसे अपने अपराध को स्वीकार करने और प्रायश्चित करने की अनुमति दी जाती थी। यदि कोई सदस्य संघ की शिक्षाओं और अनुशासन का पालन नहीं कर रहा होता था, तो उसे उपोसथ सभा में चेतावनी दी जाती थी और यदि आवश्यक होता, तो उसे संघ से निष्कासित भी किया जा सकता था।

संघ की आर्थिक व्यवस्था

बौद्ध संघ न केवल एक धार्मिक संस्था थी, बल्कि एक संगठित सामाजिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था का भी महत्वपूर्ण अंग था। इसकी कार्यप्रणाली केवल आध्यात्मिक अनुशासन तक सीमित नहीं थी, बल्कि इसका एक सुव्यवस्थित आर्थिक ढांचा भी था। बौद्ध संघ के सदस्यों का जीवन भिक्षा पर आधारित था, जिसमें वे समाज के सहयोग से अपने दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे। संघ की आर्थिक व्यवस्था मुख्य रूप से भिक्षाटन, संघ की संपत्ति और वित्तीय संसाधनों, तथा राजाओं और आम जनता से मिलने वाले सहयोग पर आधारित थी। संघ का आर्थिक आधार पूरी तरह से दान और समाज की उदारता पर निर्भर था, क्योंकि भिक्षुओं को किसी प्रकार की संपत्ति रखने या अर्जित करने की अनुमति नहीं थी। यह व्यवस्था संघ की सामाजिक समरसता और समाज के साथ इसके गहरे संबंध को दर्शाती है। बौद्ध संघ की आर्थिक व्यवस्था का सबसे महत्वपूर्ण तत्व भिक्षाटन प्रणाली थी, जिसे पालि में पिंडपात कहा जाता था। यह संघ के भिक्षुओं और भिक्षुणियों के लिए आवश्यक था, क्योंकि उनके जीवनयापन के लिए कोई अन्य आय का स्रोत नहीं था। भिक्षु और भिक्षुणियाँ अपने दिन की शुरुआत भिक्षाटन से करते थे, जिसमें वे विभिन्न गाँवों और नगरों में जाकर भोजन प्राप्त करते थे। भिक्षाटन केवल भोजन प्राप्त करने की प्रक्रिया नहीं थी, बल्कि यह एक आध्यात्मिक अभ्यास भी था। संघ के भिक्षु अहंकार और लोभ से मुक्त रहने के लिए कोई भी भोजन मांगने या पसंद करने का प्रयास नहीं करते थे, बल्कि जो कुछ भी दान में मिलता था, उसी को ग्रहण करते थे। भिक्षु चतुर्विध भोजन (अन्न, फल, जड़ें और द्रव्य) ग्रहण कर सकते थे, लेकिन वे केवल उतना ही भोजन स्वीकार करते थे, जितना उनके निर्वाह के लिए पर्याप्त हो। भिक्षाटन की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण नियम यह था कि भिक्षु केवल एक निश्चित समय तक ही भोजन प्राप्त कर सकते थे और उन्हें सूर्यास्त के बाद भोजन करने की अनुमति नहीं थी। यह नियम आत्मसंयम और अनुशासन बनाए रखने के लिए बनाया गया था। भिक्षुओं को भोजन के लिए विशेष पात्र दिए जाते थे, जिन्हें पात्रदान कहा जाता था। यह पात्रदान केवल भोजन प्राप्त करने के लिए प्रयोग किया जाता था और इसमें कोई अन्य सामग्री संग्रह नहीं की जा सकती थी। संघ के भिक्षुओं का भिक्षाटन केवल भोजन तक सीमित नहीं था, बल्कि वे आवश्यक वस्तुएँ, जैसे वस्त्र, औषधि, और अन्य दैनिक उपयोग की चीज़ें भी समाज से दान के रूप में प्राप्त करते थे। यह सुनिश्चित किया गया था कि भिक्षु केवल उतना ही स्वीकार करें, जितना कि उनकी आवश्यकता हो और वे किसी भी प्रकार की संपत्ति या धन संग्रहीत न करें।

बौद्ध संघ की आर्थिक व्यवस्था में संपत्ति और वित्तीय संसाधनों का एक विशेष स्थान था। यद्यपि व्यक्तिगत रूप से भिक्षुओं और भिक्षुणियों को कोई संपत्ति रखने की अनुमति नहीं थी, लेकिन संघ सामूहिक रूप से कुछ वित्तीय संसाधनों और संपत्तियों का स्वामी हो सकता था। संघ की संपत्ति मुख्य रूप से विहारों, स्तूपों और आश्रमों के रूप में होती थी, जिन्हें राजाओं, व्यापारियों और धनी व्यक्तियों द्वारा दान में दिया जाता था। ये विहार भिक्षुओं और भिक्षुणियों के निवास स्थान के रूप में कार्य करते थे और धार्मिक गतिविधियों के लिए भी उपयोग किए जाते थे। विहारों के भीतर पुस्तकालय, अध्ययन कक्ष और ध्यान केंद्र भी होते थे, जो संघ की शिक्षा व्यवस्था के संचालन में सहायक होते थे। संघ की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कई अन्य संसाधनों का भी उपयोग किया जाता था। संघ को विभिन्न त्योहारों, अनुष्ठानों और धार्मिक आयोजनों के दौरान बड़े पैमाने पर दान प्राप्त होता था। यह दान मुख्य रूप से वस्त्र, औषधियाँ, दैनिक उपभोग की वस्तुएँ और भूमि संपत्ति के रूप में होता था। संघ की वित्तीय नीति अत्यंत सरल थी दृ यह सुनिश्चित करना कि दान का उपयोग केवल संघ के सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जाए और इसका कोई भी दुरुपयोग न हो।

बौद्ध संघ की शिक्षा प्रणाली

बौद्ध संघ प्राचीन भारतीय समाज में न केवल आध्यात्मिक और धार्मिक गतिविधियों का केंद्र था, बल्कि यह शिक्षा के एक प्रमुख संस्थान के रूप में भी विकसित हुआ। इसकी शिक्षा प्रणाली अत्यंत अनुशासित थी, जिसमें

नैतिकता, ध्यान, ग्रंथों का अध्ययन और आत्मअनुशासन पर विशेष जोर दिया जाता था। संघ के भीतर शिक्षण पद्धति, अध्ययन सामग्री, प्रमुख बौद्ध ग्रंथों का अध्ययन और ध्यान के माध्यम से विद्यार्थियों को बौद्ध धर्म की गहरी समझ प्रदान की जाती थी। बौद्ध संघ की यह शिक्षा प्रणाली केवल धार्मिक शिक्षा तक सीमित नहीं थी, बल्कि इसमें चिकित्सा, भाषा, दर्शन और तर्कशास्त्र जैसे विषयों को भी महत्व दिया जाता था। बौद्ध संघ की शिक्षण पद्धति अत्यंत व्यवस्थित थी और इसका प्रमुख उद्देश्य नैतिकता और आत्मज्ञान की प्राप्ति था। इस शिक्षा प्रणाली में गुरु–शिष्य परंपरा को अत्यंत महत्व दिया जाता था, जिसमें अनुभवी भिक्षु नवदीक्षित भिक्षुओं को धर्म, ध्यान और आचार–संहिता का ज्ञान कराते थे। शिक्षा की यह परंपरा मौखिक रूप से संचालित होती थी और शिष्य अपने गुरु से प्रत्यक्ष संवाद के माध्यम से ज्ञान अर्जित करते थे। संघ में अध्ययन के लिए तीन प्रमुख विषयों को आवश्यक माना जाता था– विनय (अनुशासन), सुत्त (धार्मिक उपदेश) और अभिधम्म (दर्शन और तर्कशास्त्र)। इन विषयों के माध्यम से भिक्षुओं को न केवल धार्मिक शिक्षा दी जाती थी, बल्कि उन्हें समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को समझने की भी प्रेरणा दी जाती थी। शिक्षण पद्धति में व्याकरण, तर्कशास्त्र, ध्यान–साधना और संवाद शैली का भी अध्ययन कराया जाता था, जिससे भिक्षु बौद्ध धर्म का प्रचार–प्रसार कर सकें।

संघ की शिक्षा सामग्री मुख्य रूप से त्रिपिटक ग्रंथों पर आधारित थी। इन ग्रंथों को समझने और उनके अध्ययन के लिए विभिन्न भाषाओं, विशेषकर पालि और संस्कृत का अध्ययन आवश्यक माना जाता था। कुछ प्रमुख शिक्षण केंद्र, जैसे नालंदा, तक्षशिला और विक्रमशिला विश्वविद्यालयों में, बौद्ध भिक्षुओं को विस्तृत रूप से अध्ययन करने का अवसर मिलता था। इन विश्वविद्यालयों में अध्ययन की अवधि कई वर्षों तक चलती थी और शिक्षा का स्तर अत्यंत गहन होता था। संघ में अध्ययन सामग्री में केवल धार्मिक ग्रंथ ही नहीं, बल्कि गणित, चिकित्सा, व्याकरण और खगोल विज्ञान से संबंधित ग्रंथ भी शामिल किए जाते थे। इससे यह स्पष्ट होता है कि बौद्ध संघ केवल एक धार्मिक संस्था नहीं थी, बल्कि यह ज्ञान–विज्ञान का भी एक महत्वपूर्ण केंद्र था।

बौद्ध शिक्षा प्रणाली में ग्रंथों का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण था। बौद्ध संघ की शिक्षा मुख्य रूप से त्रिपिटक पर आधारित थी, जिसे बौद्ध धर्म के मूल ग्रंथों के रूप में जाना जाता है। त्रिपिटक तीन भागों में विभाजित है–

1. **विनय पिटक**– इसमें भिक्षुओं और भिक्षुणियों के लिए अनुशासन और नियमों का विस्तृत वर्णन किया गया है। यह ग्रंथ संघ में अनुशासन बनाए रखने और नैतिक शिक्षा प्रदान करने के लिए आवश्यक था।

2. **सुत्त पिटक**– इसमें गौतम बुद्ध के उपदेशों का संकलन किया गया है। यह ग्रंथ बौद्ध धर्म की शिक्षाओं को संरक्षित करने का कार्य करता था और भिक्षुओं को धर्म के प्रचार के लिए तैयार करता था।

3. **अभिधम्म पिटक**– यह ग्रंथ दर्शन और तर्कशास्त्र पर आधारित था। इसमें बौद्ध धर्म के दार्शनिक सिद्धांतों का विश्लेषण किया गया है और यह उच्च स्तर के अध्ययन के लिए आवश्यक था।

संघ की शिक्षा प्रणाली में ध्यान को केवल आध्यात्मिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए भी आवश्यक माना जाता था। भिक्षु नियमित रूप से ध्यान का अभ्यास करते थे और इसे अपने दैनिक जीवन का अभिन्न अंग बनाते थे। ध्यान–साधना से मनोवैज्ञानिक स्थिरता प्राप्त होती थी और भिक्षु अपने विचारों पर नियंत्रण रखकर शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकते थे।

निष्कर्ष

बौद्ध संघ एक सुव्यवस्थित धार्मिक, सामाजिक और दार्शनिक संस्था थी, जिसने प्राचीन भारतीय समाज को नैतिकता, अनुशासन और ध्यान की ओर अग्रसर किया। इसकी कार्यप्रणाली न केवल धार्मिक अनुशासन तक सीमित थी, बल्कि यह एक संपूर्ण जीवन शैली और समाज सुधार की अवधारणा को भी प्रोत्साहित करती थी। बौद्ध संघ ने धर्म, शिक्षा, सामाजिक समरसता और आत्मसंयम के माध्यम से समाज में एक नई चेतना जागृत की। हालाँकि, समय के साथ विभिन्न आंतरिक और बाहरी कारणों से इसका पतन हुआ, लेकिन इसकी शिक्षाएँ और कार्यप्रणाली आज भी प्रासंगिक बनी हुई हैं। आधुनिक समाज कई समस्याओं, जैसे नैतिक संकट, मानसिक तनाव और सामाजिक असमानता से जूझ रहा है, और इन सभी समस्याओं के समाधान में बौद्ध संघ की कार्यप्रणाली से महत्वपूर्ण प्रेरणा ली जा सकती है। संघ की वर्तमान प्रासंगिकता को ध्यान में रखते हुए, इसका अनुशासन, शिक्षा प्रणाली और ध्यान–साधना की विधियाँ आधुनिक समस्याओं के समाधान में प्रभावी हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त, बौद्ध संघ के प्रशासनिक ढांचे और नैतिकता आधारित शिक्षण प्रणाली पर और अधिक शोध किए जाने की आवश्यकता है, ताकि इसे वर्तमान समय की आवश्यकताओं के अनुसार विकसित किया जा सके। यदि बौद्ध

संघ की शिक्षाओं और कार्यप्रणाली को समकालीन संदर्भ में लागू किया जाए, तो यह समाज के लिए एक नैतिक और आध्यात्मिक दिशा प्रदान कर सकता है।

संदर्भ–

1. बरुआ, बी. आर., (2015), बौद्ध संघ का इतिहास एवं संरचना, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, पृ. 45.
2. श्रीवास्तव, एस. के., (2008), प्राचीन भारत में बौद्ध संघ की भूमिका, इंडियन काउंसिल ऑफ हिस्टोरिकल रिसर्च, नई दिल्ली, पृ. 78.
3. अहिर, डी. सी., (1999), भारत में बौद्ध संघ का विकास, श्री सतगुरु प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 18.
4. मिश्र, पी. के., (2010), बौद्ध संघ की प्रशासनिक व्यवस्था, राधा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 67–68.
5. तिवारी, एम. एन., (2017), बौद्ध संघ और समाज, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 39.
6. चटर्जी, एस. के., (2005), बौद्ध संघ का अध्ययन, कॉस्मो पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ. 44.
7. पांडे, जी. सी., (2001), बौद्ध धर्मः इतिहास और दर्शन, चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 156.
8. गुप्ता, एस. पी., (2014), बौद्ध संघ का सामाजिक पहलू, आर. के. प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 98.
9. थापर, रोमिला. (2002), अशोक और मौर्य साम्राज्य का पतन, पेंगुइन इंडिया, नई दिल्ली, पृ. 130.

Cite this Article-

'प्रिन्स कुमार यादव', "बौद्ध संघ की कार्यप्रणाली– एक अध्ययन", Research Vidyapith International Multidisciplinary Journal (RVIMJ), ISSN: 3048-7331 (Online), Volume:1, Issue:11, November 2024.

Journal URL- https://www.researchvidyapith.com/

DOI- 10.70650/rvimj.2024v1i4006

Published Date- 08 November 2024